श्रावण वद–३, शनिवार, दि. १८–८–१९६२,
सातवाँ अधिकार, प्रवचन नं. १०

यह मोक्षमार्गप्रकाशक का सप्तम अध्याय चलता है। उसमें निश्चय–व्यवहार नय का अभास, वास्तविक नय नहीं, निश्चय क्या है और व्यवहार व्यवहार क्या है उसको जाने बिना निश्चय का आभास, व्यवहार का आभास अवलम्बि का मिथ्यादृष्टि का कथन चलता है। यहाँ तक आया।

'**तथा निश्चय–व्यवहार दोनों को उपादेय मानता है वह भी भ्रम है;...**' आया न? मोक्षमार्ग की बात चलती है। अपना आत्मा शुद्ध द्रव्यस्वभाव उसका अंतर में अनुभव करके निर्विकल्प वीतराग परिणति जो हो वह सच्चा निश्चयमोक्षमार्ग है। वह अंगीकार करने लायक है, पर्याय प्रगट करने लायक है। पर्याय उपादेय है, उस दृष्टि से। और बीच में राग आता है वह वस्तु स्वरूप की चीज नहीं। व्यवहार रत्नत्रय वस्तु का स्वरूप नहीं है, वस्तु का स्वरूप माने मोक्षमार्ग का स्वरूप नहीं। व्यवहार रत्नत्रय आया वह मोक्षमार्ग का स्वरूप नहीं। स्वरूप नहीं उसको स्वरूप कहना वह निमित्त की आपेक्षा से अन्यथा कथन करने में आया। तो दो को उपादेय मानना मिथ्यादृष्टि है। समझ में आया?

मुमुक्षु :-- अनेकांत नहीं हुआ?

उत्तर :-- अनेकांत यह--निश्चय आदरणीय है और व्यवहार आदरणीय नहीं, उसका नाम अनेकांत है। नीचे की अवस्था चौथे गुणस्थान में। कहते हैं कि नहीं? नीचे की अवस्था में तो व्यवहार आदरणीय है कि नहीं? भगवान! व्यवहार अर्थात् क्या? वह तो राग–भाग है। राग का आदर है? राग का आदर और वीतराग परिणति का आदर, दो का आदर है? तो दो का तो विरोध है, दो में तो विरोध है। सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्र का परिणाम आत्मस्वभाव के अवलम्बन से निर्मल हुआ वह वीतरागभाव है, वह सच्चा मोक्षमार्ग है और राग है वह विकार भाव है, तो सच्चा कहाँ–से आया? दो को उपादेय कहाँ–से मानना? और दो मोक्षमार्ग है नहीं। दो है नहीं तो दो का उपादेयपना बनता नहीं। समझ में आया? वह भी भ्रम है। ए.. शेठी! कहो, समझ में आया?

निश्चय–व्यवहार दोनों को उपादेय--अंगीकार (करने योग्य), आदरणीय मानना मिथ्यादृष्टि है, भ्रम है, अज्ञान है। '**क्योंकि निश्चय–व्यवहार का स्वरूप तो...**' देखो, स्वरूप दोनों का '**परस्पर विरोधसहित है।**' परस्पर तो विरुद्ध प्रकार से है। निश्चयमोक्षमार्ग

और व्यवहारमोक्षमार्ग परस्पर विरुद्धता से है। विरुद्धता है तो एक आदरणीय और यह भी आदरणीय ऐसा विरुद्धता में कहाँ-से आया?

मुमुक्षु :-- परस्पर विरुद्ध है क्या?

उत्तर :-- परस्पर व्यवहार से निश्चय विरुद्ध और निश्चय से व्यवहार विरुद्ध। वीतराग परिणति से राग विरुद्ध, राग परिणति से वीतराग परिणति विरुद्ध।

मुमुक्षु :-- ... सहचर क्यों कहा गया?

उत्तर :-- साथ में रहते हैं, उसमें साथ में रहते नहीं? उसमें क्या? साथ में हो उसमें क्या है? साथ में छहों द्रव्य रहते हैं। समझ में आया? सहचर क्या? एकसाथ हो तो एक हो गया है? सहचर नाम साथ में रहनेवाला, (तो) दो हो गया। एक निर्मल परिणति, एक राग परिणति। निर्मल के साथ राग की परिणति रहती है।

मुमुक्षु :-- दोनों की मित्रता है?

उत्तर :-- मित्रता नहीं। व्यवहार से मित्रता कहने में आता है, निश्चय से विरोध है। देखोन, यहाँ क्या आया? वह तो साथ रहते हैं और उसको कुदेव, कुगुरु, कुशास्त्र की श्रद्धा का अभाव हुआ, कुशास्त्र का ज्ञान का अभाव हुआ, अव्रत आदि का अभाव हुआ तो ऐसे विकल्प को शुभ को अनुकूल अर्थात् साथ में रहने में तटस्थ निमित्तरूप गिनकर उसको व्यवहार का आरोप कहने में आया है। व्यवहार है वह मोक्षमार्ग है नहीं।

'**क्योंकि निश्चय-व्यवहार का स्वरूप...**' भाव '**तो परस्पर...**' व्यवहारभाव से निश्चयभाव, निश्चयभाव से व्यवहारभाव (विरुद्ध है)। निश्चय का स्वरूप निर्विकल्प परिणति, व्यवहार का स्वरूप राग परिणति, दो परस्पर विरुद्ध है। व्यवहार निश्चय विरुद्ध और निश्चय से व्यवहार विरुद्ध है। बराबर है धन्नालालजी? दोनों विरुद्ध? '**कारण के समयसार में ऐसा कहा है :--**' महा जैनसिद्धांत का मर्म। '**ववहारोऽभूदत्थो भूदत्थो देसिदो दु सुद्धणओ**' इस टूकड़े में पूरे शासन का रहस्य आया है।

मुमुक्षु :-- ..

उत्तर :-- हाँ, भूदत्थो है, भूयत्थो। 'द' का 'य' हुआ।

'**ववहारोऽभूदत्थो अभूयत्थो भूदत्थो भूयत्थो देसिऊणे**' इसमें है। '**देसिदो दु सुद्धणओ**', वह सब भावार्थ एक ही होता है।

मुमुक्षु :-- ..

उत्तर :-- हाँ, वह तो होता है।

'**अर्थ :-- व्यवहार अभूतार्थ है,...**' देखो, महासिद्धांत। व्यवहार, क्या कहते हैं? अभूतार्थ है, असत्यार्थ है, झूठा है। बिलकुल भूतार्थ नहीं। वह तो है इस अपेक्षा

से भूतार्थ, परन्तु आदरणीय अपेक्षा से भूतार्थ है नहीं। अभूतार्थ, अभूत-असत्, असत्। व्यवहार असत्य है। कारण कहो... यहाँ मोक्षमार्ग की बात चलती है कि नहीं? मोक्षमार्ग मोक्ष का कारण है कि नहीं? क्या?

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- क्या? क्या लिखा है? क्या है? परांग्मुख होकर, किसको? कहाँ? वह तो दूसरी बात है। अर्थात् वह है इतना। परांग्मुख होकर स्वरूप में ठरना यह बात है। कहाँ है? क्या बात है? मेरा मोक्षमार्गप्रकाशक यहाँ था वह आया नहीं।

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- वह शास्त्र का ज्ञान करने की बात है। परांग्मुख होना वह दूसरी बात है, वह दूसरी बात है।

व्यवहार असत्यार्थ है अर्थात् यहाँ तो मोक्षमार्ग, मार्ग यानी कि मोक्ष कार्य का कारण। अपनी पूर्ण निर्मल दशा मोक्ष कार्य, उसका कारण दो प्रकार--उसमें एक यथार्थ कारण है और एक असत्यार्थ कारण है। देखो, कारण का न्याय उसमें निकला। समझ में आया?

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- उपचार से, आरोप देकर निमित्त की अपेक्षा को लेकर अन्यथा है उसको कारण कहना, यथार्थ कारण है नहीं। यथार्थ है नहीं, परन्तु अयथार्थ को उपचार से कहना उसका नाम मार्ग है। है नहीं, कथंचित् है नहीं। कथंचित् कैसा? कथंचित् भूतार्थ सत्य है और अभूतार्थ असत्य है। एक ही बात।

व्ययवहार सो असत्यार्थ है, '**सत्यस्वरूप का निरूपण नहीं करता,...**' देखो! व्यवहार सच्चे भाव को, सत्य भाव को, सत्य स्वरूप को कहता नहीं। राग है उसको सम्यग्दर्शन, व्यवहार कहता है। तो सत्य स्वरूप को वह कहता नहीं। समझ में आया? बीच में रागा है न? देव-गुरु-शास्त्र का राग, उसको व्यवहार सम्यग्दर्शन कहता है। तो कहते हैं कि सत्य स्वरूप को प्ररूपता नहीं। सत्यस्वरूप जो वीतरागश्रद्धा है ऐसा नहीं कहता है। राग श्रद्धा है ऐसा कहता है। वह सत्य के वाच्य को कहता नहीं। समझ में आया? यह महा गाथा चारों अनुयोग की कूँची है।

सत्य भाव को, सत्य स्वरूप को, सत्य वाच्य को, जो सम्यग्दर्शन सत्य है उसको व्यवहार प्ररूपता नहीं। निश्चय सम्यग्दर्शन जो अपना शुद्ध चैतन्य की परिणति, सम्यग्दर्शन निर्विकल्प वह सत्य है, वह निश्चय है, यथार्थ है। ऐसे सत्य को व्यवहार प्ररूपता नहीं। ऐसे भाव को व्यवहार कहता नहीं। '**किसी अपेक्षा...**' देखो! किसी अपेक्षा नाम निमित्त की अपेक्षा '**उपचार से अन्यथा...**' वह कारण नहीं, मार्ग नहीं उसको

अन्यथा नाम है नहीं उसको कहता है।

यहाँ तो मोक्ष का कारण लेकर... समयसार में तो भूदत्थमस्सिदो त्रिकाल द्रव्य आश्रय भूतार्थ शुद्धनय लिया और अपनी पर्याय रागादि सब अभूतार्थ लिया है। समझ में आया? यहाँ तो मोक्षमार्ग में ऊतारकर, एक कारण भूतार्थ है और एक कारण असत्यार्थ है। झूठे कारण को कारण है नहीं उसको अन्यथा तरीके कहता है उसको व्यवहार कहने में आता है। मोक्षरूपी कार्य उसमें भेदरूपी व्यवहाररत्नत्रय देव-गुरु-शास्त्र की श्रद्धा, पंच महाव्रत का परिणाम वह सत्यरूप कारण नहीं। मोक्ष का कार्य का सत्यरूप कारण नहीं, वह सत्य मार्ग नहीं, वह सत्य उपाय नहीं। सत्य उपाय नहीं (है) उसको अन्यथा असत्य को उपाय है ऐसा व्यवहारनय कहती है। समझ में आया? बाबुभाई!

सत्य स्वरूप जो सम्यग्दर्शन का सत्य स्वरूप, सम्यक्ज्ञान का सत्य स्वरूप, सम्यक्चारित्र का सत्य स्वरूप, कारण का सत्य स्वरूप, क्षमा का सत्य स्वरूप, तप का सत्य स्वरूप, व्रत का सत्य स्वरूप व्यवहारनय यथार्थ स्वरूप का निरूपण करता नहीं। यथार्थ कहो कि सत्य कहो। यथार्थ स्वरूप का वह कथन करता नहीं। इतनी तो स्पष्ट बात है।

'**किसी अपेक्षा...**' मात्र एक निमित्त देखकर, सहचर देखकर '**उपचार से अन्यथा निरूपण करता है।**' सत्य है उससे असत्य, असत्य को यह है ऐसा कहने में आता है। (ऐसा) करता है वह व्यवहारनय का लक्षण है। व्यवहारनय का लक्षण है। समझ में आया? ये व्यवहार की बहुत गड़बड़ी चलती है न? व्यवहार है कि नहीं? व्यवहार है कि नहीं? क्या व्यवहार है? सुन तो सही।

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- रखड़ा। व्यवहार राग है, राग है, राग है, राग है, पुण्य है, विकल्प है, है, किसने ना कही? लेकिन वह सत्य स्वरूप नहीं। अन्यथा को सत्य कहता है। वह सत्य को सत्य कहता ही नहीं व्यवहार। व्यवहार का लक्षण ही ऐसा है।

'**तथा...**' बहुरि माने तथा, '**शुद्धनय जो निश्चय है,...**' अब सामने (कहते हैं)। क्या चलता है? दो परस्पर विरुद्ध है उसकी व्याख्या चलती है। दो परस्पर विरुद्ध है--निश्चय से व्यवहार विरुद्ध, व्यवहार से निश्चय विरुद्ध। विरुद्ध कैसे है उसका स्पष्टीकरण करते हैं। व्यवहारनय अन्यथा कहती है, जबकि शुद्धनय जो निश्चय है वह भूतार्थ है, सत्यार्थ है, सच्चे भाव को कहती है। '**जैसा वस्तु का स्वरूप है...**' जैसा मोक्षमार्ग का स्वरूप है, जैसा त्रिकाली द्रव्यस्वभाव है, जैसी निर्मल परिणति तप आदि की है, जहाँ-जहाँ निर्मल शुद्ध संयमादि की परिणति है, ऐसा वस्तु का स्वरूप है '**वैसा निरूपण करता है।**' जैसी निर्मल पर्याय या निर्मल द्रव्य (है), उसको ही वह वास्तविकरूप

से प्ररूपता है। समझ में आया?

'जैसा वस्तु का स्वरूप वैसा निरूपण करता है।' निरूपण कहो, कथन करता है, लेकिन उसका वाच्य ही अन्यथा है। व्यवहारनय का अन्यथा वाच्य है, निश्चयनय का यथार्थ वाच्य है ऐसा कहते हैं। **'वैसा निरूपण करता है।'** नाम वैसा यथार्थ उसका वाच्य है। निश्चय और शुद्धनय का वास्तविक यथार्थ वाच्य--भाव है। व्यवहार का यथार्थ है नहीं। **'इसप्रकार इन दोनों का स्वरूप तो विरुद्धतासहित है।'** देखो, सिद्ध किया। इसप्रकार (यानी) ऊपर कहा उस प्रकार से। व्यवहार अभूतार्थ--असत्य स्वरूप को कहती है और सत्य स्वरूप को कहती नहीं। शुद्धनय सत्यार्थ--सत्य भाव को कहती है। **'इसप्रकार इन दोनों का स्वरूप तो विरुद्धतासहित है।'** दोनों का स्वरूप तो विरुद्धतासहित है। दोनों का स्वरूप तो विरुद्धतासहित है। समझ में आया?

उसमें अनेकांत किया है, हाँ! क्या? व्यवहार असत्यार्थ है। ऊपर से पहले लेते हैं। **'सत्यस्वरूप का निरूपण नहीं करता।'** एक बात। **'किसी अपेक्षा उपचार से अन्यथा निरूपण करता है।'** अनेकांत किया। भाई! पहला शब्द, शुरूआत में। सत्य कहता नहीं और असत्य कहता है, इसप्रकार दो से अनेकांत कहा। समझ में आया? आहा..! देखो न, पाठ में ही ध्वनि ऐसा है। व्यवहार अभूतार्थ है, सत्यस्वरूप को कहता नहीं, किसी अपेक्षा उपचार से अन्यथा निरूपण करता है। तीन बोल आये, व्यवहार के तीन बोल आये।

अब, शुद्ध के। **'शुद्धनय जो निश्चय है,...'** व्यवहार अभूतार्थ है, यह शुद्धनय निश्चय है वह भूतार्थ है, सत्य है। **'जैसा वस्तु का स्वरूप है वैसा निरूपण करता है।'** लो, समझ में आया? अन्यथा तो है नहीं। **'जैसा वस्तु का स्वरूप है वैसा निरूपण करता है।'** वहाँ अन्यथा कहने की बात तो उसमें रहती नहीं। **'इसप्रकार इन दोनों का स्वरूप तो विरुद्धतासहित है।'** इक बाजु स्वरूप की ओर ढलना, एक बाजु पर तरफ का लक्ष्य से विकार उत्पन्न होना, दोनों विरुद्ध है। परस्पर दोनों विरुद्ध है। राग के लक्ष्य से अंतर में जाने की प्रयत्न दशा होती है, अंतर में जाने के प्रयत्न से रागभाव होता नहीं। व्यवहाररत्नत्रय का पर आश्रय है, निश्चयरत्नत्रय का स्व आश्रय है। व्यवहाररत्नत्रय रागरूप है, निश्चयरत्नत्रय निर्विकल्प अरागरूप है। निश्चयरत्नत्रय अभेद द्रव्य का आश्रय करके अभेद होता है, व्यवहाररत्नत्रय पर का आश्रय करके भेद होता है। समझ में आया? यह अधिकार तो सूक्ष्म है। क्लास में यह अधिकार लेना (ऐसा कहा गया)। समझ में आया? समझ में आया कि नहीं, हजारीमलजी? क्लास में (लेना), क्लास आया है। नहीं तो इस (अधिकार का) थोड़े समय पहले वाँचन हो गया है।

'इसप्रकार इन दोनों का स्वरूप...' दोनों का भाव, दोनों का वाच्य **'तो विरुद्धतासहित है।'** दोनों में विरोध है। राग, व्यवहार मोक्षमार्ग पर का आश्रय करता है, (निश्चय) स्व का आश्रय करता है। निर्विकल्प है, वह विकल्प राग है। यह अभेद है, पर्याय उसमें अभेद होती है, (व्यवहार में) पर्याय भिन्न-भिन्न छिन्न-छिन्न होती है। समझ में आया? इतनी तो स्पष्ट बात है (फिर भी चिल्लाते हैं), व्यवहार कारण है, व्यवहार कारण है। अरे..! यहाँ व्यवहार कारण कहते हैं, अन्यथा कारण को कारण कहते हैं यह व्यवहार का लक्षण है। देवीलालजी! क्या अन्यथा कारण? कारण तो एक ही है वास्तव में। व्यवहार अभूतार्थ की अपेक्षा कारण तो एक ही है। कोई भी कार्य में कारण दो प्रकार का नहीं। कारण का कथन दो प्रकार से चलता है। साधन दो प्रकार का नहीं, साधन की कथनी दो प्रकार से चलती है, साधन तो एक ही प्रकार का है। स्वरूप अंतर में एकाग्र होना, शुद्ध श्रद्धा, ज्ञान, रमणता साधन एक ही है। और वह कारण भी एक ही है। समझ में आया?

झघडा करते हैं न? उपादान और निमित्त दो कारण। समझ में आया? दो कारण तो व्यवहारनय का प्रमाण-नय से कथन करने में आया है। एक के साथ दूसरे का जुडान करके कथन करना वह तो व्यवहारनय हो गयी। समझ में आया? अपने-अपने कारण से पदार्थ में पर्याय का कार्य उत्पन्न होता है वह यथार्थ है। पर से उत्पन्न होता है (ऐसा कहना) अयथार्थ है, असत्य है। उपचार से अन्यथा कहता है, कारण नहीं और कारण कहना उसका नाम व्यवहार है। समझ में आया? मांगीलालभाई!

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- बिलकुल होता नहीं। पानी अपने से उष्ण होता है, अपने उपादान कारण से। निमित्त कारण से अन्यथा कथन करता है, व्यवहार अन्यथा कथन करती है।

मुमुक्षु :-- दृष्टान्त कठिन पड़ता है।

उत्तर :-- दृष्टान्त कठिन पड़ता है, अपने कहते हैं न, यह दृष्टान्त कठिन पड़ता है, ऐसा कहते हैं। सोनामें से दागीना होता है... दागीना कहते हैं? गहना होता है वह सोनी नहीं करता है। अपने कारण से है। उपचार कारण को अन्यथा कारण है, कारण है ही नहीं यथार्थ में, उसको कारण कहना वह व्यवहारनय का लक्षण है। सोनामें से गहना होता है, सोनी से नहीं।

मुमुक्षु :--...

उत्तर :-- अरे..! होता नहीं। कौन कहता है होता नहीं? उसका कार्यकाल हो और होवे नहीं? पर्याय का कार्यकाल हो और हो नहीं, उसका अर्थ क्या है? प्रत्येक

द्रव्य का समय-समय में उसका कार्यकाल है, उस समय में कार्य होता है। निमित्त हो, दूसरी चीज हो, उसका किसने निषेध किया? समझ में आया? वह कारण नहीं। मूलकारण समर्थ कारण, एक ही समर्थ कारण है। समझ में आया? जैन सिद्धांत में दो लिया है न? जैन सिद्धांत प्रवेशिका में। वह तो व्यवहार बताया है। न्यायशास्त्र के कथन की पद्धति ली है। उपादान और निमित्त दो होकर समर्थ कारण होता है, लिखा है न? यहाँ निश्चय में समर्थ कारण एक ही है। अपनी पर्याय का कार्य अपनी पर्याय से होता है, यह समर्थ कारण एक ही है। निमित्त के बिना होता नहीं, वह है तो होता है, ऐसा अन्यथा कथन व्यवहारनय करती है।

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- पर्याय का निश्चय से तो द्रव्य भी कारण नहीं। पर्याय पर्याय का कारण है। वास्तव में तो छः द्रव्य में जो उत्पाद होता है एक समय में, अनंत, अनंत द्रव्य है न? एक-एक द्रव्य में अनंत गुण है, तो अनंत गुण की एक समय की उत्पादरूपी पर्याय स्वकाल है, उस उत्पाद का निश्चय से पूर्व का व्यय भी कारण नहीं निश्चय से और ध्रुव भी कारण नहीं। उत्पाद का उत्पाद कारण, व्यय का व्यय कारण, ध्रुव का ध्रुव कारण। समझ में आया? प्रवचनसार-१०१ गाथा, अमृतचंद्राचार्य टीका में स्पष्ट करते हैं। उत्पाद का उत्पाद कारण, उत्पाद अपने आश्रय से होता है, उत्पाद व्यय के आश्रय से नहीं तो निमित्त आश्रय से है यह तो है ही नहीं। नवरंगभाई! कठिन बात भाई! यह तो उसकी पूर्व पर्याय कारण, उपादान कारण उसका व्यय होकर उत्पाद (होता है), वह व्यवहार का कथन है। समझ में आया?

छः द्रव्य में अनंत गुण की एक समय का उत्पाद नाम पर्याय, उत्पाद का उत्पाद कारण। वही कारण और वही कार्य, वही वीर्य और उसका कार्य, वही शक्ति और उसका कार्य, वही साधन और उसका साध्य। समझ में आया? लेकिन व्यवहारनय का कथन चलता है, वास्तविक नहीं, अयथार्थ है उसको निमित्त की अपेक्षा करके उपाचर से कहते हैं, उसमें दुनिया भ्रमित हो गयी है। दो नय से भरमाया है, समयसार नाटक में आता है न? निश्चय और व्यवहार दोनों में जगत भरमाया है। निश्चय क्या सत्यार्थ और व्यवहार असत्यार्थ उपचार से कहने में आया, यह समझते नहीं। समझ में आया? क्या?

मुमुक्षु :-- इसमें धर्म क्या हुआ?

उत्तर :-- आत्मा की निर्मल पर्याय अपनी शुद्ध शुद्ध से होती है उसका नाम धर्म। राग से होती नहीं, धर्म राग से होता नहीं, भगवान से होता नहीं, भगवान के दर्शन से होता नहीं, यात्रा से धर्म होता नहीं, वह धर्म, ऐसा कहते हैं। समझ

में आया? अपनी निर्मल धर्मदशा द्रव्य के आश्रय से होती है, वह पहले नहीं हुई थी तो होती है ऐसा कहने में आता है। परन्तु है धर्म की पर्याय निर्विकल्प वीतराग उसका कोई आश्रय-फाश्रय है नहीं। समझ में आया? धर्म के लिये यह बात चलती है, क्या है? ठीक कहा, बाबुभाई ने कि इसमें धर्म क्या आया? उसके पुराने दोस्त साथ में आये हैं, उसको कैसे समझ में आया? समझ में आया? पकड़ में न आये जल्दी से, इसमें धर्म क्या आया? आप कहते हो, ऐसा ज्ञान होता है, व्यवहार आचार और फलाना... लेकिन धर्म (क्या)?

धर्म वह कि आत्मा में निमित्त का लक्ष्य छोड़कर, राग का लक्ष्य छोड़कर अकेला द्रव्य शुद्ध एकरूप... वह आयेगा, नीचे आयेगा, देखो! '**शुद्ध आत्मा का अनुभव सच्चा मोक्षमार्ग है।**' दूसरा पैरेग्राफ आयेगा। शुद्ध द्रव्य एक वस्तु, पर का लक्ष्य छोड़कर, परद्रव्य, परगुण, परपर्याय, परविकार सब का लक्ष्य छोड़कर, वह कारण-फारण नहीं, वह व्यवहार है, वह व्यवहार कारण-फारण है नहीं, उसका लक्ष्य छोड़कर द्रव्य एकरूप अभेद अभेद द्रव्य वस्तु पर दृष्टि देने से निर्मल पर्याय में निर्विकारी दशा उत्पन्न हो उसका नाम धर्म और मोक्षमार्ग है। शेठी! सब स्वतंत्र है? पहले उत्पन्न नहीं हुआ था उस अपेक्षा से कहा। परन्तु उत्पन्न है, अपने से है।

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- वह आश्रय कारण व्यवहार हुआ। तीन अंश है न सत्, तीन अंश सत्, तो एक सत् का दूसरा कारण (कहना) वह व्यवहार हो गया। सत् अहेतुक है। पर्याय भी सत् अहेतुक है, उसको राग भी कारण नहीं। धर्म की श्रद्धा, ज्ञान, चारित्र में राग भी कारण नहीं, द्रव्य भी कारण नहीं। सत् अहेतुक है। आहा..! लेकिन है उसका हेतु कहना क्या? तो तो द्रव्य सत् है उसको भी कोई हेतु कहना। कोई ईश्वरकर्ता है, कोई फलाना कर्ता है। स्वयंसिद्ध अकृत्रिम वस्तु, पर्याय भी किसीके द्वारा की नहीं गयी, व्यय भी किसी के द्वारा किया गया नहीं, द्रव्य भी किसी के द्वारा बना हुआ नहीं। समझ में आया? गड़बड़ बहुत हुई है न, इसलिये पकड़ने में थोड़ा कठिन पड़े। ये तो ठीक है, बाबुभाई ने प्रश्न किया वह। कहो, समझ में आया?

'**इसप्रकार इन दोनों का स्वरूप तो विरुद्धतासहित है। तथा तू ऐसा मानता है...**' अब आया। व्यवहार और निश्चय का भान बिना आभास को तू अवलम्बता है, तुझे निश्चय की भी खबर नहीं और व्यवहार की भी खबर नहीं। '**तथा तू ऐसा मानता है कि सिद्धसमान शुद्ध आत्मा का अनुभवन...**' सिद्ध समान शुद्ध आत्मा का। देखो न्याय। वह कहता है कि हमें तो सिद्ध समान पर्याय ऐसा जो शुद्ध आत्मा, पर्याय से हाँ! '**सिद्धसमान शुद्ध आत्मा का अनुभवन सो निश्चय,...**' सो ऐसा

निश्चय है नहीं, तुझे निश्चय की खबर नहीं। तुझे सिद्धसमान पर्याय कहाँ है? और सिद्धसमान शुद्ध आत्मा का अनुभव, वह निश्चय कहाँ-से लाया? समझ में आया? '**सिद्धसमान शुद्ध आत्मा का अनुभवन सो निश्चय...**' ऐसा तु मानता है। ऐसा है नहीं।

'**और व्रत, शील, संयमादिरूप प्रवृत्ति सो व्यवहार,...**' और व्रत पालना, शील, संयम, इन्द्रियदमन रागादि होना, वह '**प्रवृत्ति सो व्यवहार...**' प्रवृत्ति सो व्यवहार, वज़न यहाँ है। '**संयमादिरूप प्रवृत्ति सो व्यवहार, सो तेरा ऐसा मानना ठीक नहीं है;...**' सो ऐसा तेरा मानना ठीक नहीं है। दोनों में तेरा ठीक नहीं। निश्चय में भी ठीक नहीं और व्यवहार में भी ठीक नहीं। निश्चय में तुने सिद्धसमान आत्मा को माना वह ठीक नहीं और व्यवहार में प्रवृत्ति को व्यवहार मानना वह भी ठीक नहीं है। समझ में आया? मालूम भी नहीं है, क्या निश्चय और क्या व्यवहार। वह तो ओघेओघे चलो भैया, अपने माँ-बाप मन्दिर जाते हैं, अपने भी जाना, दर्शन करना, तिलक लगाना। और दो-चार बार समय मिले तो व्रत पालकर बैठना, उपवास कर डालना, उपवास कर डालना...

'**क्योंकि किसी द्रव्यभाव का नाम निश्चय और किसी का नाम व्यवहार-ऐसा है नहीं।**' कोई द्रव्य का भाव उसका नाम निश्चय और कोई द्रव्य का भाव (यानी) दूसरे द्रव्य का, उसका नाम व्यवहार, ऐसा है नहीं। ऐसा कहा उसने (तो) ऐसा है नहीं। '**एक ही द्रव्य के भाव को...**' एक पदार्थ की पर्याय को, एक ही द्रव्य की दशा को, एक द्रव्य के गुण को, पर्याय को--अवस्था को '**उस स्वरूप ही निरूपण करना सो निश्चयनय है,...**' एक ही द्रव्य के... दृष्टान्त देंगे, हाँ! '**एक ही द्रव्य के भाव को...**' पर्याय को '**उस स्वरूप ही निरूपण करना...**' जानना वह तो निश्चयनय है। '**उपचार से उस द्रव्य के भाव को अन्यद्रव्य के भावरूप निरूपण करना...**' भाव तो वही है, लेकिन अन्य का कथन करना कि वह अन्य से हुआ, समझ में आया? जैसे विकार। विकारी पर्याय अपने में है सो निश्चय है। और कर्म का निमित्त से वह भाव हुआ कहना सो व्यवहार है। समझ में आया?

एक भाव की दो अपेक्षा। अपना भाव है सो निश्चय, निमित्त का भाव, कर्म का उदय का भाव है वह व्यवहार। समझ में आया? एक द्रव्य के भाव की दो अपेक्षा। उस ही का कहना सो निश्चय, दूसरे का कहना सो व्यवहार। समझ में आया? '**उपचार से उस द्रव्य के भाव को अन्यद्रव्य के भावस्वरूप निरूपण करना सो व्यवहार है।**' दृष्टान्त, देखो दृष्टान्त देते हैं।

'जैसे--मिट्टी के घड़े को...' माटी का घड़ा, माटी की घटरूप पर्याय, माटी का घटरूप भाव, भाव। भाव का दृष्टान्त है न। मिट्टी का घड़ा, मिट्टी की पर्याय (को) **'मिट्टी का घड़ा निरूपित किया जाय सो निश्चय और घृतसंयोग के उपचार से...'** घी के सम्बन्ध का उपचार करके यह घी का घड़ा कहना सो व्यवहार है। उस ही घड़े को घी का कहना, उस ही घड़े को मिट्टी का कहना। उस ही घड़े को मिट्टी का कहना सो यथार्थ, उस ही घड़े को घी के सम्बन्ध से घी का कहना सो उपचार (है)। समझ में आया? भाव तो एक है, दो प्रकार की कथनी है। भाव तो एक यथार्थ है। मिट्टी का घड़ा वह यथार्थ है। लेकिन संयोग से अन्यथा कहने में आया है कि घी का घड़ा। घी का घड़ा होता है कहीं? तेल की तपेली होती है? बरणी, तेल की बरणी, घी की बरणी, लोट का... समझे? क्या कहते हैं? डब्बा, आटे का डब्बा।

मुमुक्षु :-- काम तो वही करते हैं।

उत्तर :-- कभी भी नहीं कर सकते हैं। अनादि से मान रखा है कि मुझे परद्रव्य के बिना काम होता नहीं, ऐसा मान रखा है। अपना-अपना कार्य परद्रव्य के अभाव से त्रिकाल हो रहा है। क्या कहा? फिर से, वह प्रश्न हुआ था हमारे, बोटाद में एक वृद्ध आदमी है। महाराज! आप लक्ष्मी नहीं... (ऐसा कहते हो), लेकिन लक्ष्मी बिना कहीं चलता है? हमें सुबर एक रूपये की सब्जी लेना जाना (पड़े), ऐसा लेना, यह चाहिये, वह चाहिये। सुन तो सही।

भगवान आत्मा अपना द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव से रहता है, चलता है। परद्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव से कभी चलाया नहीं। परद्रव्य का क्षेत्र-काल-भाव से चलता है और कहता है कि हमें परद्रव्य के बिना चलता नहीं। वह मान्यता में फेर है।

फिर से, महेन्द्रभाई, शरीर, प्रसन्नभाई के बिना चलाता है तुम्हारा आत्मा। वह तो प्रिय पुत्र है न। समझ में आया? प्रत्येक पदार्थ अपना द्रव्य--वस्तु, क्षेत्र--अवगाहन, काल--दशा और भाव--शक्ति, उससे अनादि से चल रहा है। पर का अभाव से चल रहा है। पर बिना ही चला रहा है। बराबर है? पंडितजी! .. के बिना?

मुमुक्षु :-- घी का लोटा लाओ।

उत्तर :-- वह तो बोलने में आया। उससे कहीं घी का लोटा हो जाता नहीं, लोटा तो लोटा ही है। वह तो कथन करने को, ज्ञान करने की बात है। लेकिन लोटा या घी का घड़ा बोले, घी का लोटा, उससे लोटा घी का हो गया तो काम हुआ, ऐसा है? वह तो ज्ञान में ख्याल में आया।

प्रत्येक पदार्थ अपने द्रव्य-क्षेत्र-भाव तो त्रिकाल है, क्षेत्र की वर्तमान अवस्था भिन्न-भिन्न है वह दूसरी बात है। बाकी वर्तमान पर्याय जो चलती है वह पर की पर्याय

का अभाव से ही चलती है। तो परद्रव्य बिना ही स्वद्रव्य का काम होता है। त्रिकाल होता है और मानता है कि मुझे परद्रव्य से काम लेना पड़ता है। लक्ष्मीचंदजी! बराबर है? प्रत्येक द्रव्य अनंत द्रव्य का अभाव से अपना काम चलाते हैं। प्रत्येक पदार्थ अनंत द्रव्य का कार्य के बिना... अनंत द्रव्य का कार्य क्या? उसकी पर्याय। अनंत द्रव्य का कार्य उसकी पर्याय। उस कार्य की पर्याय बिना प्रत्येक अनंत पदार्थ अपना कार्य से काम लेते हैं, पर से कोई काम लिया (ऐसा) तीन काल में बना नहीं। कठिन बात भाई!

वह प्रश्न हुआ था, बोटाद में। हरजीवनभाईने प्रश्न किया था, नागरभाई के भाई। महाराज! आप ये लक्ष्मीवालों को फटकारते हो कि लक्ष्मी नहीं, धूल है... चलता नहीं उसके बिना। सुबह एक रूपया चाहिये, पहले तो दो-चार पैसे लगते थे सब्जी का। अब तो एक रूपया हो तो मुश्किल से पूरा पड़े। दस लोग हो (घर में)। थैली चाहिये, रूपया चाहिये, एक अच्छा आदमी (चाहिये), वृद्ध हो गया हो तो साथ में एक आदमी चाहिये सब्जी लेने जाये तब, ऐसे में हमें (पैसे) बिना चले कैसे? चले कैसे? उसको कहा कि, प्रभु! प्रत्येक पदार्थ ने पर के अभाव से ही चलाया है। पर का भाव से चलावे तो दो द्रव्य एक हो जाता है। समझ में आया? क्या कहते हैं, देखो।

मिट्टी है न मिट्टी? **'घृतसंयोग के उपचार से उसी को घृत का घड़ा कहा जाय सो व्यवहार। ऐसे ही अन्यत्र जानना।'** ऐसे ही अन्यत्र जानना। **'इसलिये तू किसी को निश्चय माने और किसी को (पर को) व्यवहार माने...'** पर का भाव तो उसका निश्चय है। स्व का भाव अपना निश्चय है। पर का भाव को व्यवहार और अपना भाव को निश्चय, ऐसा है नहीं। कितना स्पष्ट किया है देखो! **'वह भ्रम है।'**

'तथा तेरे मानने में भी निश्चय-व्यवहार को परस्पर विरोध आया।' देखो! हमने जो निश्चय-व्यवहार का विरोध बतलाया था, उससे तेरा विरोध दूसरी जात का आया। समझ में आया? **'तेरे मानने में भी निश्चय-व्यवहार को परस्पर,...'** हाँ! परस्पर। व्यवहार से निश्चय तेरी मान्यता, क्या? **'यदि तू अपने को सिद्धसमान शुद्ध मानता है...'** यदि तू अपने आप को सिद्ध (समान) शुद्ध माने। वज़न यहाँ है, हाँ! सिद्ध पर। **'तो व्रतादिक किसलिये करता है?'** तो व्रतादिक किसलिये करता है? सिद्ध को व्रत कैसा? तेरी पर्याय सिद्धसमान है तो व्रत कैसा? तप कैसा? मोक्षमार्ग कैसा?

'सिद्ध समान सदा पद मेरो', बनारसीदास में आता है न? लेकिन वह तो द्रव्य

की अपेक्षा से सिद्ध समान। क्या पर्याय की अपेक्षा से सिद्ध समान है? समझ में आया? तू सिद्ध समान शुद्ध मानता है तो **'व्रतादिक किसलिये करता है?'** तो व्रतादिक क्यों करता है? **'यदि व्रतादिक के साधन द्वारा सिद्ध होना चाहता है...'** अर्थात् मोक्षमार्ग का साधन करके सिद्ध होना चाहे। समझ में आया? **'तो वर्तमान में शुद्ध आत्मा का अनुभव मिथ्या हुआ।'** सिद्धसमान, सिद्धसमान शुद्ध का अनुभव मिथ्या (हुआ)। सिद्धसमान, हाँ! समझ में आया? क्या कहा? तो वर्तमान में सिद्ध समान **'शुद्ध आत्मा का अनुभव मिथ्या हुआ।'** बराबर है? समझ में आता है? फिर शुद्ध आत्मा का अनुभव कहेंगे। यह सिद्धसमान शुद्ध का अनुभव तेरा मिथ्या है, ऐसा कहा। सिद्ध तो पर्याय है। पर्याय--कार्य पूर्ण हो गया? और साधन करता है मोक्षमार्ग का? साधन कहाँ रहा? तुझे निश्चय-व्यवहार की कुछ खबर नहीं।

'इसप्रकार दोनों नयों के परस्पर विरोध है;...' दोनों नयो के परस्पर विरोध है। तू सिद्ध समान मान और साधन कर, विरुद्ध हो गया तेरी नय का। साधन करना व्यवहार और सिद्धपर्याय मेरी है उसका नाम निश्चय, वह रहा ही नहीं, दोनों में विरोध है। **'इसलिये दोनों नयों का उपादेयपना नहीं बनता।'** देखो! दोनों नयों का अंगीकार करना (बनता) नहीं। एक निश्चयनय का अंगीकार करना बने, व्यवहार का अंगीकार करना बने नहीं।

अब, वह शास्त्र पढ़ा हुआ है, वाँचन किया है न उसने, इसलिये सामने दलील देता है। लेकिन आप ऐसा कहते हो, महाराज! लेकिन समयसार आदि, प्रवचनसार.. अरे..! परमात्मप्रकाश (में) **'शुद्ध आत्मा के अनुभव को निश्चय कहा है,...'** शुद्ध आत्मा के अनुभव को वहाँ सच्चा कहा है, सच्चा कहा है, निश्चय कहा है, यथार्थ कहा है। समझ में आया? और **'व्रत, तप, संयमादिक को व्यवहार कहा है;...'** समयसार में व्रत, तप, संयम उसको व्यवहार कहा है। तो ऐसा हम मानते हैं, समयसार में कहा है ऐसा हम मानते हैं। तो हमारी क्या भूल है उसमें? आप तो कहते हो, हमारी भूल और आप सच्चे। परन्तु समयसार में लिखा है, हम मानते हैं, ऐसा ही मानते हैं। शुद्धात्मा का अनुभव वह निश्चय और व्रत, तप व्यवहार ऐसा समयसार में लिखा है। ऐसा लिखा नहीं है, तुझे मालूम नहीं। उसका समाधान। ऐसा हम मानते हैं, सब दलील तो ऐसे ही करे न। शास्त्र में है, देखो! इस शास्त्र में है, इस शास्त्र में है। सुन तो सही।

'समधान :-- शुद्ध आत्मा का अनुभव सच्चा मोक्षमार्ग है,...' शुद्ध आत्मा, शुद्ध सिद्धसमान पर्याय नहीं। वह कहता है कि सिद्धसमान अनुभव सो निश्चय। ऐसा नहीं। शुद्ध आत्मा का अनुभव वह निश्चय।

मुमुक्षु :-- बहुत बड़ा फ़र्क़ हो गया।

उत्तर :-- बहुत फ़र्क़ हो गया। समझ में आया?

वह कहता है कि सिद्धसमान उसको हम निश्चय कहते हैं। शुद्ध आत्मा का अनुभव कहा था न तीसरी पंक्ति में? सिद्धसमान शुद्ध आत्मा। नहीं, सिद्धसमान नहीं। वह तो पर्याय हो गयी। द्रव्य शुद्ध, द्रव्य शुद्ध वस्तु। शुद्ध नाम पर से पृथक् ऐसा शुद्ध आत्मा का अनुभव, पर्याय में निर्मलता का अनुभव वह सच्चा मोक्षमार्ग है। समझ में आया?

फिर से, यहाँ अभी आयेगा। शुद्ध का अर्थ आयेगा। शुद्ध आत्मा का अनुभव। शुद्ध का अर्थ द्रव्य, परद्रव्य से लक्ष्य हटाकर अपना द्रव्य पर दृष्टि देना वह द्रव्य शुद्ध है। उसका अनुभव निर्मल पर्याय का होना, शुद्ध का होना वह मोक्षमार्ग है। समझ में आया? शुद्ध आत्मा का अनुभव। वह कहता है कि शुद्ध सिद्धसमान अनुभव। सिद्धसमान अनुभव (हो) तो मोक्षमार्ग रहा कहाँ? तो साधन करने का रहा कहाँ? तुमने तो सिद्ध समान पर्याय में मान लिया है। वह तेरा निश्चय सच्चा नहीं। शुद्ध आत्मा का अनुभव। परद्रव्य, गुण, पर्याय विकार, पर का हाँ! उससे लक्ष्य हटाकर अपने द्रव्य में लक्ष्य किया तो द्रव्य शुद्ध है, पर से भिन्न। उसका अनुभव, वह तो निर्मल पर्याय हुयी। निर्विकल्प वीतरागी श्रद्धा, वीतरागी ज्ञान, वीतरागी चारित्र वह सच्चा मोक्षमार्ग है। यह सच्चा धर्म है, बाबुभाई! यह सच्चा धर्म है। समझ में आया? लेकिन सिद्धसमान अनुभव, सिद्धसमान अनुभव (कहता है)। क्या सिद्धसमान है? सिद्ध कहाँ है तुझे? सिद्धसमान अनुभव वह मोक्षमार्ग कहे तो निश्चय... पुनः निश्चय मार्ग कहे, वह कहाँ-से आया?

‘**इसलिये उसे निश्चय कहा।**’ इसलिये उसे, माने? शुद्ध आत्मा अभेद पर दृष्टि है, द्रव्य पर, उसका अनुभव हुआ सच्चा, निर्मल पर्याय, ‘**इसलिये उसे निश्चय कहा।**’ अब अर्थ करते हैं। ‘**यहाँ स्वभाव से अभिन्न, परभाव से भिन्न--ऐसा ‘शुद्ध’ शब्द का अर्थ जानना।**’ क्या कहते हैं? शुद्ध आत्मा, शुद्ध आत्मा ऐसा कहा न पहले? शुद्ध आत्मा। तो शुद्ध किसको कहते हैं तुम? अपना स्वभाव से अभिन्न, अपना स्वभाव से एकरूप द्रव्य। अपना स्वभाव से अभिन्न एकरूप द्रव्य और परभाव से भिन्न। परद्रव्य, परगुण, परपर्याय, पर का भाव से भिन्न। परद्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव से भिन्न अपने द्रव्य के स्वभाव से अभिन्न। अपना स्वभाव... गुण-पर्याय भी नहीं, अपना स्वभाव एकरूप अभिन्न। स्वभाव से अभिन्न एकरूप द्रव्य। और परभाव से भिन्न। कर्मा का उदय आदि, शरीर की क्रिया आदि, उदय वह सब परभाव है, परभाव। समझ में आया?

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- सब का एकरूप है। सब का। आत्मा का स्वभाव गुण-पर्याय उसके साथ द्रव्य अभिन्न है। द्रव्य उसके साथ अभिन्न है। अपने गुण और पर्याय के साथ द्रव्य अभिन्न है। ऐसा शुद्ध द्रव्य जो अभिन्न है... समझ में आया?

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- उस अशुद्ध की यहाँ बात ही नहीं है। द्रव्य पर दृष्टि है तो द्रव्य पर से भिन्न है ऐसा शुद्ध, अपना स्वभाव से अभिन्न, अपना भाव से अभिन्न। फिर कोई गुण-पर्याय कुछ रहा ही नहीं। अपना स्वभाव से अभिन्न एकरूप द्रव्य। समझ में आया? कहो, यह मोक्षमार्गप्रकाशक, शास्त्र का उकेल करता है। उसमें भी थोड़ा कठिन पड़ता है, तो सीधा समयसार समझन में (कठिन ही पड़े)।

मुमुक्षु :-- .. वहाँ तो सीधा पढ़ने में कितनी...

उत्तर :-- सीधी बात समयसार।

कहते हैं कि '**यहाँ स्वभाव से अभिन्न,...**' स्वभाव शब्द का अर्थ अपना सब भाव, सब भाव से अभिन्न एकरूप। गुण-पर्याय से अभिन्न सब। उसमें कोई भेद नहीं कि यह पर्याय और यह गुण ऐसा नहीं। स्वभाव से अभिन्न, परभाव से भिन्न। परद्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव है पर। परभाव से (अर्थात्) विकार से भिन्न ऐसा यहाँ नहीं लेना है। यहाँ परभाव में विकार नहीं लेना है। परभाव में परद्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव लेना है। समझ में आया? वह तो स्वद्रव्य जो स्वभाव से अभिन्न है ऐसी दृष्टि हुई, वहाँ राग का अभाव होकर शुद्ध की परिणति होती है। तब शुद्ध द्रव्य परद्रव्य से जुदा हुआ। समझ में आया? क्या कहते हैं, समझ में आता है? ज्ञानचंदजी! फिक्षर से, फिर से। एक बार इन्होंने वन्स मोर कहा था, शेठी ने। नहीं? कहा था कि नहीं? वन्स मोर का अर्थ फिर से, ऐसा न? दूसरी बार।

कहते हैं कि भैया! तू सिद्धसमान पर्याय का अनुभव सो निश्चय कहता है, सो तेरी भूल है। व्रत, संयम की प्रवृत्ति को तू व्यवहार कहता है, तेरी दोनों में भूल है। तुझे निश्चय-व्यवहार का भान नहीं। निश्चय इसको कहते हैं कि अपना जो द्रव्य अपना स्वभाव से स्वभाववान अभिन्न, स्वभाव से स्वभाववान अभिन्न, उसकी दृष्टि देने से पर्याय में निर्मलता का अनुभव होता है। वह मोक्षमार्ग कहने में आता है। समझ में आया?

'**परभाव से भिन्न...**' परद्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव, कर्म का उदय, कर्म की पर्याय, कर्म का गुण, शरीर की पर्याय, शरीर का गुण, शरीर का द्रव्य, यह सब द्रव्य-गुण-पर्याय, द्रव्य-भाव पर। पर का द्रव्य-भाव उससे भिन्न। परभाव अर्थात् पर का द्रव्य और भाव, उसका भाव जो गुण और पर्याय, यह सब परद्रव्य गुण-भाव से भिन्न आत्मा।

मुमुक्षु :-- नास्ति से हो गया।

उत्तर :-- नास्ति से है। यहाँ तो ऐसा कहते हैं कि सिद्धपर्याय समान नहीं लेना। परद्रव्य से भिन्न, अपना स्वभाव द्रव्य से अभिन्न ऐसा शुद्ध का अर्थ है। तू शुद्ध का अर्थ सिद्धसमान पर्याय लगा दे, ऐसा शुद्ध का अर्थ है नहीं। अनर्थ करता है। कितने ही निश्चय माननेवाले हैं न? सिद्धसमान मैं हो गया, सिद्धसमान। कहाँ-से सिद्धसमान हो गया? वह तो निश्चयाभासी हुआ। हम तो सिद्धसमान, सिद्धसमान। सुन तो सही, मर जायेगा वहाँ। सिद्धसमान कहाँ-से लाया? पर्याय में सिद्ध समान हो तो तुझे बाकी क्या रहे? विचारना, ध्यान करना बाकी कहाँ रहा? तुझे निश्चय का भी भान नहीं, व्यवहार का भी भान नहीं। समझ में आया?

शुद्ध आत्मा ऐसा कहा है, हाँ! शुद्ध आत्मा, उसका अनुभव। शुद्ध अर्थात् अपने भाव से अभिन्न ऐसा जो शुद्ध आत्मा, उसका अनुभव (वह) निर्मल पर्याय हुयी।

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- उसका यहाँ काम नहीं है, उसका अभी काम नहीं है।

यहाँ तो अन्दर शुद्ध द्रव्य अभिन्न, अभिन्न पर दृष्टि पड़ी तो उसकी पर्याय में अनुभव निर्मल हुआ, बस इतनी बात। समझ में आया? अनुभव तो पर्याय का होता है। द्रव्य का, गुण का अनुभव नहीं होता। वह तो १५वीं गाथा में कहा। सामान्य का आविर्भाव का अर्थ क्या? पर्याय जो प्रगट निर्मल हुयी, उसको वहाँ सामान्य कहा है। कहाँ? १५वीं गाथा, जैनशासन में।

यहाँ सामान्य नाम शुद्ध द्रव्य अपना स्वभाव से अभिन्न, अपना स्वभाव से अभिन्न ऐसा जो द्रव्य उसका अंतर लक्ष्य करके जो पर्याय में अनुभव होता है, वह शुद्ध आत्मा तो द्रव्य हुआ। अभिन्न, स्वभाव से अभिन्न द्रव्य हुआ। उसका अनुभव पर्याय हुयी।

मुमुक्षु :-- अनुभव पर्याय हुयी।

उत्तर :-- अनुभव पर्याय है, अनुभव तो पर्याय है न।

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- कहा न, ये सब गुण और पर्याय का भेद ही नहीं है उसमें। पर से भिन्न, परद्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव। अपना स्वभाव से अभिन्न, अपने गुण और पर्याय सब एकरूप द्रव्य में है उसमें भेद नहीं करना कि यह पर्याय है, यह विकार है, यह गुण है, ऐसा कुछ नहीं। अपना जितना स्वभाव है उससे अभिन्न द्रव्य है। तो अभिन्न द्रव्य में एकरूप की दृष्टि पड़ने से पर्याय में निर्मलता का अनुभव होना उसका नाम मोक्षमार्ग है।

मुमुक्षु :-- स्वभाव में रागादि...

उत्तर :-- वह फिर रहा नहीं। द्रव्य पर दृष्टि गयी न। भेद भी कहाँ रहा। अभेद अनुभव पर्याय का निर्मल का हुआ। राग एक ओर रह गया। समझ में आया? राजमलजी! समझ में आता है? कहो, आता है दूसरे को? ये तीन पंडित हमारे बैठे हैं न। ये चौथे पंडित हमारे यहाँ है, बाबुभाई। वह गुजरात के पंडित है। समझ में आया? ये तो मुँबई के पंडित है, लो।

यह बात बहुत अच्छी ली है, हाँ! भाई! तू अपनी पर्याय को सिद्धसमान मानकर प्रवृत्ति तो करता है व्रत की, साधन की अथवा साधन की, तो साधन मानना और साध्य पूर्ण दशा पर्याय में मानना, वह तेरा निश्चय-व्यवहार दोनों फोक है। तू निश्चय-व्यवहार को जानता नहीं। ऐसा भगवान ने कहा नहीं निश्चय को।

यहाँ तो शुद्ध आत्मा, शुद्ध आत्मा बस इतना। शुद्ध आत्मा उसका अर्थ क्या? शुद्ध यानी स्वभाव से अभिन्न, परभाव से भिन्न ऐसा शुद्ध आत्मा, बस। समझ में आया? ऐसा शुद्ध आत्मा का अनुभव, उस ओर का झुकाव, द्रव्य पर झुकाव हुआ (तो) पर्याय में निर्मलता उत्पन्न होती है वह मोक्षमार्ग है। वह तो स्पष्ट बात है, उसमें कुछ गड़बड़ी है नहीं। समझ में आया? स्वभाव से अभिन्न... भाई! यह माँगा था, हमारे दुलीचंदजी, हेमराजजी ने। यह दो नय है वह अटपटी है। तो क्या है? गड़बड़ी चलती है। बहुत मर्म भर दिया है, ओहोहो..! सातवें अध्याय का यह एक-दो लिया। समझ में आया? मिलान, दो का मिलान करे। पहले एकांत निश्चयाभास, व्यवहाराभास, फिर निश्चय के साथ व्यवहार दोनों एकसाथ कहते हैं।

'**ऐसा 'शुद्ध' शब्द का अर्थ जानना।**' यह किसका अर्थ हुआ? शुद्ध का अर्थ। शुद्ध। निर्मल पर्याय मोक्षमार्ग की उसका अर्थ नहीं है। अनुभव, सच्चा अनुभव हुआ उसका अर्थ नहीं। यह शुद्ध पहले का अर्थ इतना हुआ। समझ में आया? सच्ची निर्मल अनुभव पर्याय की बात नहीं है। शुद्ध आत्मा किसको कहते हैं? तो कहते हैं कि अपने स्वभाव से अभिन्न और परभाव से भिन्न ऐसा शुद्ध शब्द का, इस शुद्ध शब्द का अर्थ जानना। '**संसारी को सिद्ध मानना--ऐसा भ्रमरूप अर्थ 'शुद्ध' शब्द का जानना।**' संसारी पर्याय के समय भी संसारी भी मैं हूँ और निश्चय से मैं सिद्ध हूँ, ऐसा है नहीं। निश्चय से संसारपर्याय तेरी है। समझ में आया? निश्चय से संसारपर्याय तेरे में है। क्या व्यवहार से है? संसारी पर्याय अपने स्वद्रव्य की है।

'**संसारी को...**' मलिन पर्याय को निर्मल पर्याय जानना, वह भी पूर्ण निर्मल ऐसा शुद्ध शब्द का अर्थ न जानना, ऐसा अर्थ शुद्ध शब्द का न लेना। बराबर है? वह एक बोल कहा। निश्चय की भूल दिखायी, निश्चय की भूल दिखायी। उसकी निश्चय की भूल कि हम सिद्ध समान अनुभव करते हैं वह हमारा निश्चय।

मुमुक्षु :-- ..

उत्तर :-- हाँ, वह पर्याय का अनुभव निश्चय कहता है। यह तो द्रव्य तरफ का झुकना उसमें अनुभव पर्याय का होता है वह मोक्षमार्ग है। समझ में आया?

'तथा व्रत, तप आदि मोक्षमार्ग है नहीं,...' अरे..! व्रत और तप। लो आया बाबुभाई! ये आप के बुझुर्गों को बैठेगा कि नहीं? बिठाना पड़ेगा? कहते हैं कि व्रत, तप, भक्ति, पूजा आदि शब्द पड़ा है न? दान, दया मोक्षमार्ग नहीं है। **'निमित्तादिक की अपेक्षा उपचार से इनको मोक्षमार्ग कहते हैं,...'** मात्र सहचर देखकर, निमित्तरूप देखकर... समझे? इतना प्रयोजन भी है न? ऐसा परिणाम आये बिना रहता नहीं। **'निमित्तादिक की अपेक्षा उपचार से इनको मोक्षमार्ग कहते हैं, इसलिये इन्हें व्यवहार कहा है।'** निमित्त की अपेक्षा से उपचार से मोक्षमार्ग कहते हैं, इसलिये इन्हें व्यवहार कहा।

'इसप्रकार भूतार्थ-अभूतार्थ मोक्षमार्गपने से इनको निश्चय-व्यवहार कहा है;...' लो। इसप्रकार भूतार्थ शुद्ध द्रव्य का, एक द्रव्य का अनुभव। अभूतार्थ--व्रत, तप का उपचार से कथन, ऐसे मोक्षमार्गपने से.. भूतार्थ मोक्षमार्ग, अभूतार्थ मोक्षमार्ग। भूतार्थ को निश्चय, अभूतार्थ को व्यवहार कहा है। **'सो ऐसा ही मानना।'** लो, सो ऐसा ही मानना, आगे-पीछे नहीं मानना, फेरफार नहीं मानना, जैसा है, वैसा मानना।

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- उपचार का अर्थ व्यवहार इतना लेना यहाँ। वह तो विकार है, सब भेद है, सद्भुत व्यवहारनय से पर्याय है वह भी उपचार है। यहाँ भेद पड़े न सब। असद्भुत के दो है, उपचार और अनुपचार, ख्याल में आता है और नहीं ख्याल में आता है, सब उसमें आ गया, चारों व्यवहार उसमें आ गये, चारों आ गये। समझ में आया? लेकिन यहाँ तो खास उस राग को बताना है न, व्रत, तप को मानता है न, तो कहते हैं, नहीं, नहीं वह नहीं है, लेकिन उपचार से निमित्त से कहने में आया।

'परन्तु यह दोनों ही सच्चे मोक्षमार्ग हैं, इन दोनों को उपादेय मानना, वह तो मिथ्याबुद्धि है।' दोनों सच्चे मोक्षमार्ग हैं, निश्चय भी सच्चा और व्यवहार भी सच्चा। ऐसा कथन एक बार आया था, देखो भाई! मार्ग लिखा है शब्द। व्यवहारमार्ग लिखा है पुस्तक में। परन्तु मार्ग क्या है? **'दोनों को उपादेय मानना, वह तो मिथ्याबुद्धि है।'** अब दूसरा प्रश्न उठायेगा उसका उत्तर आयेगा...

(श्रोता :-- प्रमाण वचन गुरुदेव!)